

# चित्र और चित्रण की प्रामाणिकता



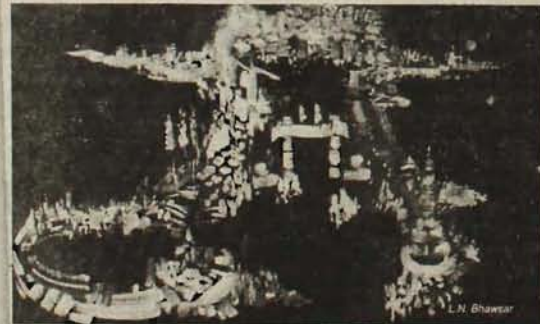
दृष्टि बोध के आरंभ से ही मनुष्य ने अनुभव और अपनी कल्पनाओं को रूप में लाने का जो प्रयास किया है, वही चित्र रूप में अवतरित हुआ है। पृथ्वी के आरंभ से आज पर्यंत जो भी कुछ कहा गया है, सोचा गया है, संकल्पना तैयार हुई है, वह केवल सुना गया है मिथ और लीजेंट की भांति, पर विश्वसनीय तब माना गया है, जब वह रूप में रूपप्रद हुआ है। इस रूपप्रद बनाने की प्रथम प्रक्रिया का नाम ही चित्र है। चित्र कहे हुए को शाश्वत बनाता है। चित्र में सही रूप में कहने की, व्यक्त करने की ताकत है, कन्वे करने की क्षमता है।

इसीलिए प्रागैतिहासिक चित्रों में प्रारंभिक जीवन शैली और आत्मरक्षा का मंत्र छुपा है, वही उस युग का आत्म संदेश है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रागैतिहासिक युग की मांग संदेश और संप्रेषण थी। इसलिए चित्र की प्रामाणिकता इसी में थी कि वह अपनी रूपप्रद छटा से संदेश प्रसारित कर सके-संप्रेषण का उद्दीपन कर सके।

समय बदला और धीरे-धीरे बुद्धि और सोच में कीमती आने लगी। चित्र से अपेक्षाएं बढ़ने लगीं और उसी अनुरूप चित्र न केवल संदेश वाहक रहा, अपितु चित्र रूप और संदेश में रंग माधुर्य-वर्ण विन्यास की भूमिका भी निभाने लगा।

चित्र की प्रामाणिकता की पराकाष्ठा यहाँ तक आ गई कि चित्र छटा की हाइपोथीसिस वास्तव में हिप्नोटिज्म (Hypnotize) ही करने लगी। चित्र की यही 'भाव विभोर' कर देने वाली गुणात्मकता ही उस युग की चित्र प्रामाणिकता थी।

त्रेता और द्वापर चित्र की इस भाव विभोर कर देने वाली प्रामाणिकता के साक्षी रहे हैं।



सेन्य यथार्थ-चित्रकार प्रोफेसर लक्ष्मीनारायण भावसार

त्रेता में भगवान राम के लंका विजय के बाद अयोध्या आगमन पर एक समारोह में चित्र प्रदर्शनी भी आयोजित की गई थी, जिसमें चक्रवर्ती महाराज दशरथ के उत्तराधिकारियों के जीवन की झांकी दर्शाई गई थी। चित्र प्रदर्शनी देखते-देखते सीताजी ने प्रदर्शनी के आयोजक लक्ष्मण से एक प्रश्न किया- यह किसका चित्र है? लक्ष्मण उत्तर देने की जगह शमीले हो गए और भाव विभोर हो विह्वल हो

मनुष्य के बौद्धिक विकास के साथ चित्रकला भी विकसित होती गई।

प्रागैतिहासिक चित्रों में प्रारंभिक जीवन शैली और आत्मरक्षा का मंत्र छुपा है। जबकि समय के साथ अपेक्षाएं बढ़ने लगीं और चित्र हिप्नोटिज्म करने लगे हैं...

गए। यह चित्र उर्मिला का था। लक्ष्मण जी को पोर्ट्रेट में उर्मिला का त्याग फूट-फूट कोष रहा था- यही हिप्नोटिज्म उस युग की चित्र प्रामाणिकता थी।

द्वापर में बाणासुर की बेटी उषा स्वप्न में एक राजकुमार को देखती है- मोहित हो जाती है, अपनी सब्जी चित्रलेखा से कहती है- स्वप्न में ऐसा राजकुमार देखा है, इसे चित्र रूप में दिखाओ- चित्रलेखा ने दो-चार-दस पोर्ट्रेट बनाकर आखिरकार वही बना दिया, जो उषा चाहती थी ये थे कृष्ण के पौर अतिरुद्ध। द्वापर में चित्र की प्रामाणिकता यही थी कि स्वप्न तक में देखे रूप को शाश्वत पोर्ट्रेट के रूप में झलका देना अर्थात् पोर्ट्रेट की शत-प्रतिशत झलक ही प्रामाणिकता थी।

जो चित्र की प्रामाणिकताएं यूरोपीय जगत में हजार-दो-हजार साल पहले स्थापित हुईं, उन्हें हमने त्रेता और द्वापर युग में ही अर्जित कर लिया था। लेकिन यूरोपीय चित्रकला के प्रारंभिक पुनर्जागरण काल में हमारी त्रेता-द्वापर युगीन चित्रकला में दर्पण अनुरूप समतुल्यता आपासित हुई, जो जॉन वान आइक- हेयबर्ट, रोजर, बांडर-वीडन आदि चित्रकारों के चित्रों में आपासित हुई और एक उद्योष हुआ Air excavated बस

यही चित्र प्रामाणिकता थी, प्रारंभिक पुनर्जागरण की। जब इन्हीं चित्रकारों के अनुयायी और लगभग अनुसरण करने वाले जब इसी पद्धति में उच्चकोटि का या उत्कृष्ट कार्य करने लगे तो हमने 'high Renavissance' महान पुनर्जागरण कहा- यूरोपीय चित्रकला का महान पुनर्जागरण काल की चित्रकला की प्रामाणिकता थी दर्पण तुल्य समरूपता पैदा कर देना। इस महान कार्य को कालजयी बनाने वाले चित्रकारों में अग्रणी रहे लियोनार्दो दा विंची, मायकेलेंजेलो, रेफेल और इनके समकालीन (और अनेक शिष्यगणों) जैसे आंद्रे डेल-सेट्टो, एंजेलो-ब्रोजियो, आंद्रे सेलारियो, एंटोनीयो-एलेग्री, कोरेजियो, जियोर्जिनो, टीशियन, टिटोरेटो आदि। यही अंतिम लक्ष्य था- प्रामाणिकता थी जैसे का जैसा, लेकिन चित्र प्रामाणिकता यहीं आकर अवरुद्ध नहीं हो गई। यह जरूर हुआ कि लंबे समय तक एक व्यवहारवाद चलता रहा था।

लोगों और कला पारखियों को लगने लगा था कि प्रामाणिकता कहीं प्रतिबंधित तो नहीं होती जा रही है। इस डर से आहत चित्रकारों में असीमित ऊर्जा के धनी पीटर पाल

(1577-1640) रुबेन्स ने अपने गुरुजनों और मार्गदर्शकों से अलग आकर चित्र की प्रामाणिकता को नए आधार दिए, जिसके माध्यम से दर्पण तुल्य समता से आगे बढ़कर रुबेन्स ने (Drametisation of forms) रूपों का नाटकीयकरण कर अपने चित्रों में इसे चित्र प्रामाणिकता बना दिया, जिसका सबसे बड़ा उदाहरण उसका चित्र (लूसीपस की कन्याओं का बलात्कार) है। इसी शृंखला में रेम्बा 1606-1669 जिसने चित्र प्रामाणिकता को यहाँ तक पहुँचाया कि सभी ओर अंधकार है चित्रकार तुलिका चलाता है वही प्रकाशमान होता है। रेम्बा के पोर्ट्रेट इसके शाश्वत प्रमाण हैं। इसी शृंखला में इनके समकालीन-एंटोनीवान ड्रैवोस, वान आद्रिया, फ्रांस हाव्स, बरमीयर, निकोलस पासनी, वातु इनके चित्र प्रामाणिकता वाहक बने। बहुत धीरे-धीरे चित्रों की प्रामाणिकता रोमांटिक एटीद्यूड की ओर मुड़ी, जिसके लक्ष्य थे रोमांचित कर देने की छटना, हतप्रभ कर देने की लक्ष्यता। इसी तारतम्य में जान कांस्टेबल, टर्नर, जेरीकार्ट और उनके समकालीन थे, जिन्होंने प्राकृतिक वातावरण, भयावह स्थितियाँ (एक जंगल में घुड़सवार का सिंह से सामना, आंधी, तूफान) आदि ऐसे दिल दहला देने वाले रूप और रंग योजनाओं के चित्र प्रस्तुत किए, जिसमें दर्शक रोमांचित रहे बिना नहीं रहता।

दर्शक के रोम-रोम खड़े हो जाते हैं। लगभग 'बोरोक युग' के बाद रोमांटिक एटीद्यूड की यही चित्र प्रामाणिकता थी। इसके बाद जैसे ही चित्र की प्रामाणिकता समाज की वास्तविकता और अंतिम आदमी की तथ्यकथा बनी- गसस्टोव कुबो इसके अधिपति बने। इन्होंने जीवन की वास्तविकता को अभिव्यक्ति दी। अनेक समकालीन और अनुयायी इनके पक्षधर बने ही थे कि एक हादसा हुआ। जानकारी मिली कि एक यंत्र निकला है, जो यथावत चित्र-प्रतिरूप बना देता है, जिसे कैमरा कहते हैं- चित्रकार हताश होने लगे। चित्रकार और समकालीन ने मिलकर चित्र मापदंड प्रामाणिकता के रूप बदले 'जो है उससे हटकर' बस यही से आधुनिक चित्रण प्रारंभ हुआ। 'जो है उससे हटकर' अपना मौलिक कुछ सृजनात्मक यही चित्र प्रामाणिकता प्रारंभ हुई, जो आज पर्यंत झकझोरे ले रही है। अनेक प्रयोग चल रहे हैं दिग्दर्शन के माध्यम से चित्र और चित्रण की प्रामाणिकता को गतिशील बनाने के।

■ डॉ. लक्ष्मीनारायण भावसार